डाक पंजीयन संख्या : बीकानेर/068/2021-23
REG. NO. RAJHIN/2002/14707

चोखी खेती

उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

अगस्त, 2021 ई-संस्करण

दलहन उत्पादन : आवश्यकता, उचित भंडारण और बाधाएँ

प्रो. (डॉ.) रक्षपाल सिंह
कुलपति, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

राजस्थान में 18 प्रतिशत क्षेत्रफल पर दलहनी फसलें बोई जाती हैं, रबी मौसम में चना, मटर व मसूर और खरीफ के मौसम में मोठ, उड़द, मूंग, चवला व अरहर प्रमुख दलहनी फसलें हैं। देश में दलहन उत्पादन की दृष्टि से राजस्थान का छठा स्थान है और राज्य के जोधपुर जिले में दालों का सर्वाधिक उत्पादन होता है। खरीफ की दलहन फसलों में मोठ सर्वाधिक भू–भाग पर बोया जाता है। मोठ के उत्पादन में भारत में राजस्थान का पहला स्थान है। दलहनी फसलों में सर्वाधिक सूखा सहन करने वाली फसल मोठ है। कठोर जलवायु परिस्थितियों में अविश्वसनीय अनुकूलन के कारण दलहन किसी क्षेत्र की फसल प्रणाली का एक अभिन्न अंग हैं। तेजी से विकास, जल्दी परिपक्वता और मिट्टी की उर्वरता को बहाल करने की क्षमता फलियां और दलहन को शुष्क क्षेत्र के लिए मूल्यवान फसल बनाती है। खराब मौसम के अलावा, बेहद खराब भूजल संसाधनों, कम जैविक सामग्री, खराब उर्वरता और मिट्टी की खराब जल धारण क्षमता से स्थिति और भी बढ़ जाती है। दालें प्रोटीन और खनिजों का समृद्ध स्रोत हैं और इसलिए अनाज आधारित मानव आहार की पूरक हैं और शाकाहारियों की पोषण सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। दालें अंकुरित अनाज के रूप में खाए जाने वाले शाकाहारी भोजन का अभिन्न अंग हैं। दलहनों में नत्रजन स्थिरीकरण का नैसर्गिक गुण होने के कारण वायुमंडलीय नत्रजन को अपनी जड़ों में स्थिर करके मृदा उर्वरता को भी बढ़ाती हैं। इनकी जड़ प्रणाली मूसला होने के कारण कम वर्षा वाले शुष्क क्षेत्रों में भी इनकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है। इन फसलों के दानों के छिलकों में प्रोटीन के अलावा फास्फोरस अन्य खनिज लवण काफी मात्रा में पाये जाते हैं, जिससे पशुओं और मुर्गियों के महत्वपूर्ण रातब के रूप में इनका प्रयोग किया जाता है। दलहनी फसलें हरी खाद के रूप में प्रयोग की जाती हैं जिससे भूमि में जीवांश पदार्थ तथा नत्रजन की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती है।

भारत में दालों का उत्पादन मांग की तुलना में काफी कम रहा है। इससे बढ़ती जनसंख्या के कारण दलहनों की प्रति व्यक्ति खपत कम होती जा रही है। देश में दालों की कमी कोई नई बात नहीं है क्योंकि उत्पादन की तुलना में खपत अधिक होती है। एक अनुमान के अनुसार देश में दालों की वार्षिक खपत लगभग 18.0 मिलियन टन है जबकि उत्पादन 13.0 से 14.8 मिलियन टन के बीच घूम रहा है। इस प्रकार देश में 3.0–4.0 मिलियन टन दालों की कमी पड़ती है। अपनी खपत को पूरा करने के लिए भारत को प्रतिवर्ष 2.5–3.0 मिलियन टन दालों का आयात करना पड़ता है। वर्तमान में दालों की कीमतें आसमान छू रही हैं । इससे देश में दालों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता भी कम होती जा रही है। दालों की उपलब्धता बढ़ाने और इनके दामों पर अंकुश लगाने के लिए भारत सरकार ने दालों के निर्यात पर 2006 से लगी पाबंदी को बढ़ा दिया है। भारत में प्रति व्यक्ति कम से कम दालों की न्यूनतम उपलब्धता 50 ग्राम प्रति दिन तथा बीज आदि के लिए 10 प्रतिशत दलहन उपलब्ध कराने के उद्देश्य से वर्ष 2030 तक 32 मिलियन टन दलहन उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है जिसके लिए हमें वार्षिक उत्पादन में 4.2 प्रतिवर्ष की बढ़ोत्तरी प्राप्त करनी होगी।

दलहनों का भंडारण कैसे करें

प्रदेश में कई बार सुनने में आता है की अनाज भंडारण कीटग्रस्त होने के कारण किसानों को भारी नुकसान हुआ । प्रदेश में अनाज भंडारण के लिए ज़्यादातर किसानों के पास सुरक्षित भंडारण नहीं हैं। किसान परंपरागत तरीकों से अनाज व दलहन का भंडारण करते हैं। इसके परिणामस्वरूप किसान लंबे समय तक भंडारण नहीं कर पाते हैं और किसानों को उत्पादन का सही मूल्य नहीं पाता है। क्योंकि किसान खरीफ, रबी की फसल आते ही बाजार और मंडियों में बेच देते हैं। राजस्थान के श्रीगंगानगर और हनुमानगढ़ जिलों में भंडारण के लिए लोहे के टंकीनुमा पात्र का उपयोग करते हैं। इससे नमी, आद्रता व कीटों का असर नहीं होता है। यदि दलहन मड़ाई के बाद भली–भांती सुखाकर एवं उपचारित करके भण्डारण नहीं किया हो तो ऐसी दशा में भण्डार की दीवारों की कन्दराओं या छिद्रों में जो घुन छिपे रहते हैं वे बाद में असर दिखाते हैं। दलहनों में घुन का प्रकोप दलहनी फलियों में दाना बनने तथा अधपकी दशा में खड़ी फसल में होता है। इसके नियंत्रण के लिए खड़ी फसल में जब दाने पूरी तरह से भर जायें तब ट्राइजोफास अथवा घुलनशील गंधक का छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त निबौली के सत का घोल फलियों पर छिड़काव करके भी घुन के आक्रमण से बचा जा सकता है। अनाज भण्डारित करते समय घुन से बचाने के लिए, अनाज में नमी की मात्रा कम रखने पर कीटों का प्रजनन कम होगा तथा बीज की अंकुरण क्षमता भी प्रभावित नहीं होगी। कुठले के अन्दर आक्सीजन की प्रचुरता कम करने के लिए वायुरूद्ध कर देना चाहिए जो कि धातु के कुठले में आसानी से किया जा सकता है। यदि भण्डारित अनाज में घुन का आक्रमण हो गया हो तो ऐसी दशा में ई.डी.बी. एम्पुल का प्रयोग कर सकते हैं । एम्पुल को भण्डार पात्र में तोड़कर छोड दें तथा पात्र को वायुरुद्ध कर दें। ई.डी.बी. की गैस वायु से भारी होने के कारण एम्पुल से नीचे की ओर प्रवेश कर जाती है। धूमण के सात दिन बाद भण्डार ग्रह कुछ समय के लिए खोल देना चाहिए।

दलहन उत्पादन में बाधाएँ

सुनिश्चित मूल्य और सुनिश्चित बाजार के कारण ही चार प्रमुख फसलों, गेहूं, चावल, गन्ना और कपास की पैदावार बढ़ी है और ऐसा देखा गया है कि केवल इन चार फसलों पर ही बाजार टिका हुआ है। मुख्यतः इसी कारण दालों का उत्पादन नहीं बढ़ पाया है। यद्यपि सरकार न्यूनतम समर्थन मूल्य तो घोषित कर रही है, किंतु पैदावार की सरकारी खरीद का कोई कारगर प्रणाली नहीं है। सुनिश्चित खरीद न होने के कारण किसानों को बाजार में सस्ते दामों में उपज बेचनी पड़ती है। इसलिए किसानों का दालों की खेती से रुझान कम हो रहा है। देश में ऐसे क्षेत्रों को चिह्नित किया जाए, जहां दलहन की खेती को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। और इसके बाद धान–गेहूं की तरह मंडियों का जाल बिछाया जाए। न्यूनतम समर्थन मूल्य में बढ़ोत्तरी के साथ–साथ सरकार को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि दलहन की पूरी उपज की सरकारी खरीद की जाएगी। दालों की पैदावार के लिए बहुत उपजाऊ जमीन और अधिक पानी की आवश्यकता नहीं पड़ती। साथ ही यह मिट्टी में नाइट्रोजन का स्तर भी बढ़ाती हैं। दालों की खेती को बढ़ावा देने से देश टिकाऊ खेती की दिशा में बढ़ेगा और किसान भी गरीबी के चक्रव्यूह से निकल पाएंगे।

वर्षा काल में पशुओं का वैज्ञानिक प्रबन्ध

डॉ. आर. एस. राठौड़[1], डॉ. दयानन्द [2], डॉ. रशीद खान[3] एवं विमल नागर[4]

वर्षा की मात्रा पर फसल उत्पादन निर्भर करता है तथा फसल उत्पादन पर ही पशुपालन निर्भर है। यानि फसल उत्पादन एवं पशुपालन एक दूसरे पर निर्भर तथा पूरक हैं। सुकाल में पशुओं को पौष्टिक खुराक मिलती है जिससे दुध उत्पादन बढ़ जाता है तथा पशुओं का मूल्य भी बढ़ जाता है। इसी प्रकार अकाल के समय चारे का उत्पादन घट जाता है तथा उपलब्धता कम होने से चारे का मूल्य बढ़ जाता है। जब चारे का मूल्य बढ़ जाता है, तो दूध उत्पादन भी घट जाता है तथा दुधारू पशुओं का मूल्य घट जाता है। इस प्रकार राजस्थान में वर्षा ऋतु का बड़ा महत्व है। हालांकि सिंचाई के साधन बढ़ने से राज्य की परिस्थितियां बदल रही हैं, फिर भी वर्षा की आज भी महत्ता है। सदियों पहले कवि ने राजस्थान में अकाल का बखान इस प्रकार किया

''पग पूंगल, धड़ कोटड़े, बाह्या बीकानेर।
भूल्यो–भटको जोधपुर, तो ठावा जैसलमेर।।''

अर्थात् राज्य में वर्षा कम होने से अकाल रूपी राक्षस के पैर पूंगल में, धड़ यानि शरीर कोटड़ा में तथा बाह्या यानि बाजू बीकानेर में रहते हैं। कभी–कभार जोधपुर में, लेकिन जैसलमेर में तो अकाल का पक्का ठिकाना है।

पशुपालन में सबसे अहम् खिलायी–पिलायी है जिस पर लगभग 70–75 प्रतिशत खर्चा होता है। वर्षा ऋतु में पशुओं को विभिन्न प्रकार की हरी घासें चरने को मिलती हैं। वहीं पशुओं से अधिक उत्पादन लेने व उन्हें स्वस्थ रखने के लिये सावधानियां बरतनी जरूरी हैं। पशुओं की संतुलित खिलायी–पिलायी के लिये सूखा चारा, हरा चारा तथा दाना–बांटा खिलाते हैं। सूखा चारा छानकर तथा साफ करके पशुओं को खिलायें। सूखा चारा खिलाने से पहले देख लें कि उसमें फफूंद नहीं लगी हो। वर्षा ऋतु में चारा भीगने से फफूंद लग जाती है, जो खिलाने से पशु बीमार हो सकता है। अतः सूखा चारा जहां भी रखा हो, उसे वर्षा से भीगने से बचाना चाहिये अन्यथा चारा खराब हो जायेगा।

वर्षा ऋतु में खेतों में हरा घास पर्याप्त मात्रा में होता है। जिन किसान भाईयों के पास सिंचाई का साधन हो, वे ज्वार व बाजरा चरी अवश्य बोयें। सिंचाई का पानी मीठा हो तो ज्वार व बाजरा चरी में 5–10 प्रतिशत ग्वार या चंवला का बीज मिलाकर बोयें ताकि चारा पौष्टिक मिले व जमीन की उर्वरा शक्ति भी बढ़े। जोत छोटी होने के कारण आजकल अड़ावा छोड़ने की परम्परा लगभग बन्द हो रही है, फिर भी जिन किसान भाईयों के पास बड़ी जोत है, वे अपने खेत का कुछ भाग अड़ावा के रूप में रखें ताकि पशुओं की चराई के साथ–साथ जमीन की उर्वरा शक्ति भी बढ़े। पश्चिमी राजस्थान में सेवण व धामन प्राकृतिक रूप से खेतों में उगता था, लेकिन अब लगभग खत्म हो गया है। सेवण व धामण घास के कम होने का मुख्य कारण खेतों में हैरो से जुताई व बुवाई है। हैरो से जुताई–बुवाई करने पर धामन घास के साथ–साथ खेजड़ी के नये पौधे भी नहीं पनप रहे, जो अकाल में किसानों के लिए विशेष लाभदायक हैं। इसी प्रकार सेवण व धामण घास भी पशुओं के लिए बहुत पौष्टिक होता है तथा ये घास कम वर्षा में भी अच्छी उपज देते हैं।

अतः जिन किसान भाईयों के खेतों में सेवण या धामण के पौधे हैं, उन्हें जड़ सहित खोदकर जड़ की गांठे अलग–अलग कर खेत का ऐसा क्षेत्र जहां से मिट्टी उड़ती है, एक निश्चित दूरी पर सीधी लाईन में वर्षा के तुरन्त बाद लगायें। इन पौधों के लगाने से टिब्बों का मिट्टी कटाव रूकेगा तथा पशुओं को पौष्टिक चारा मिलेगा। इसी प्रकार खेजड़ी के साथ–साथ अरडू के पौधे वर्षा ऋतु में अवश्य लगायें। अरडू के पौधे सींव से 7–8 फीट लाईन से चारों तरफ लगायें। अरडू का पौधा 3 से 5 वर्ष में तैयार हो जाता है। अरडू की पत्तियां रिजके के समान पौष्टिक होती है तथा वर्षभर पशुओं के लिये पौष्टिक हरा चारा मिलता है। अरडू के पेड खेत के चारों तरफ लगाने से. बाड़ का काम करेगें तथा फसल, फलदार पौधे, सब्जियां आदि की प्राकृतिक आपदा जैसे पाला व पश्चिमी हवा (झोला) से बचाव करेगें। औस से भीगा हरा चारा पशुओं को नहीं खिलायें। पशुओं की चारा नांद में आवश्यकता से ज्यादा चारा न डालें। पशुओं को आफरे या

1. सह प्राध्यापक (पशुपालन) 2. वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष 3. उद्यान विशेषज्ञ 4. एस.आर.एफ.कृषि विज्ञान केन्द्र, आबूसर–झुन्झुनूं

दस्त से बचाव के लिए हरे चारे की कुतर काटकर सूखे चारे में मिलाकर खिलायें।

दुधारू पशुओं को दूध उत्पादन के हिसाब से पर्याप्त मात्रा में दाना–बांटा देवें। गाय को 400 ग्राम तथा भैंस को 500 ग्राम दाना प्रति लीटर दूध उत्पादन के हिसाब से देवें। दाना बांटा में दला हुआ अनाज व चौकर, दलहन चूरी तथा खल या बिनौला मिलाकर बनाना चाहिए। साथ में 30–35 ग्राम नमक तथा 50 ग्राम खनिज–लवण मिलाकर खिलाना चाहिए। दाना–बांटा में अनाज (जौ/बाजरा), गेंहूं का चौकर, दलहनी चूरी (ग्वार/चना/मूंग/ मोठ/ उड़द/ चंवला आदि) तथा तिलहन (बिनोला/खल) उचित अनुपात में मिलाकर घर पर ही तैयार करें, जो रेडिमेड आहार की बजाय सस्ता व पौष्टिक होगा।

पशुओं की खिलायी–पिलायी के बाद पशुओं के स्वास्थ्य की बात आती है। वर्षा ऋतु में आंतरिक एवं बाह्य परजीवियों का प्रकोप अधिक होता है। कई बार पशु के गोबर में लटे निकलती हैं। ये लटे ही आंतरिक परजीवी हैं, जिनके नाम गोल कृमि, फीता कृमि, लिवर फ्लूक, एस्केरिस आदि है। ये आंतरिक परजीवी दुधारू पशुओं का दूध उत्पादन घटाते हैं, बछड़ी, पाडी की वृद्धि रोकते हैं तथा पाचन शक्ति कमजोर कर पशु का स्वास्थ्य बिगाड़ते है। अतः वर्षा ऋतु के शुरू में तथा अन्त में कृमिनाशक दवा अवश्य पिलायें। इसी प्रकार बाह्य परजीवी जैसे चींचड़, मक्खी, मच्छर, जूं, माईट आदि वर्षा ऋतु में अधिक पनपते हैं।

बाह्य परजीवी पशु की त्वचा पर रहकर खून चूसते हैं, घाव बनाते हैं तथा खुजली पैदा करते हैं। कई बार बाह्य परजीवी पशुओं में बीमारियां भी फैलाते हैं। बाह्य परजीवियों से बचाव के लिये सर्वप्रथम पशु को बांधने की जगह साफ सुथरी होनी चाहिए। वर्षा ऋतु में दो–तीन बार पशुओं के बांधने की जगह की मिट्टी 6–8 ईंच खोदकर खेत में डाल देनी चाहिए तथा खेत की साफ मिट्टी लाकर बिछावन कर देनी चाहिए। चिचड़ अधिकतर पशु के पृष्ठ भाग में लगते हैं। यदि कम मात्रा में हो तो हाथ से पकड़कर मार देना चाहिए। अधिक मात्रा में होने पर कीटनाशक पाउडर लगाकर मार देने चाहिए। मक्खी–मच्छर से पशुओं को बचाने के लिये हवा की दिशा देखकर धुंआ कर देना चाहिए। धुंआ करने के लिये कचरे के साथ तुम्बे की बेल डाल देनी चाहिए। तुम्बे की बेल के धुएं से पशुओं के शरीर पर एक कड़वा आवरण बन जाता है, जिस कारण मक्खी–मच्छर, पशु पर नहीं बैठेगें। इसी प्रकार आंतरिक व बाह्य परजीवियों की संख्या अधिक होने पर बचाव के लिए टीका लगाते हैं जो दोनों प्रकार के परजीवियों से पशुओं को बचाता है।

वर्षा ऋतु में गलघोंटू, लंगड़ी बुखार, मुंहपका–खुरपका, फिड़किया आदि बीमारियां होने की संभावना रहती है। इन बीमारियों से बचाव के लिये वर्षा ऋतु से पहले टीकाकरण करवा लेना चाहिए। फिर भी यदि किसान भाईयों ने टीकाकरण नहीं करवाया है तो बीमारी होने पर तुरन्त नजदीक के पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर ईलाज करवाये। राज्य सरकार द्वारा जिन गांवों में पशुचिकित्सालय नहीं हैं, वहां पर महीने की एक निश्चित तारीख को कैम्प लगाकर पशु चिकित्सक द्वारा उपचार किया जाता है। अतः ''उपचार से परहेज अच्छा'' है के अनुसार पशुओं का समय पर टीकाकरण अवश्य करवाना चाहिये।

इसी प्रकार वर्षा ऋतु में आफरा रोग एक आम समस्या है जो अधिक मात्रा में हरा चारा खाने या फलीदार हरा चारा खाने या फफूंद लगा चारा खाने से होता है। अतः सावधानी रखनी चाहिए कि पशु अधिक मात्रा में हरा चारा न खाये। आफरा आने पर पशु का प्राथमिक उपचार करें। प्राथमिक उपचार में मीठा तेल, तारपीन का तेल तथा हींग मिलाकर पशु को देना चाहिए। प्राथमिक उपचार के बाद जरूरत पड़े तो तुरन्त नजदीक के पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर पशु का उपचार करावें।

पशुओं के स्वास्थ्य के साथ–साथ उनके ग्याभिन होने तथा गर्भित पशु का विशेष ध्यान रखें। गाय–भैंस को गर्भ के सातवें महीने से तथा भेड़–बकरी को 3. 5 महीने से अलग से दाना देवें ताकि गर्भस्थ बच्चे का पूर्ण विकास हो व अगली ब्यान्त में अधिक उत्पादन दे। जो पशु ग्याभिन नहीं हो उन्हें अतिरिक्त दाना खनिज लवण मिलाकर दें ताकि पशु जल्दी गर्मी में आये। गर्मी में आयी गाय/भैंस को 12 से 18 घंटे के बाद प्रातः या सायंकाल के समय उन्नत नस्ल के टीके से गर्भाधान करवाना चाहिए। वर्षा ऋतु में ग्याभिन योग्य पाडियों व बछड़ियों को पर्याप्त मात्रा में हरा चारा तथा दाना–बांटा खनिज लवण मिश्रण मिलाकर खिलाने से ग्याभिन होने के अवसर बढ़ जाते हैं।

मूंगफली का मूल्य संवर्धन कर बढ़ाएं अपनी आमदनी

ऋचा पंत, राकेश कुमार शिवरान, केशव मेहरा, भवनत सिंह एवं नवल किशोर

मूंगफली राजस्थान के सिंचित क्षेत्रों की प्रमुख खरीफ फसल है। बीकानेर जिले के लूनकरनसर तहसील में मूंगफली का बेहतरीन उत्पादन होने के कारण इसे **राजस्थान का राजकोट** भी कहा जाता है। मूंगफली की फसल के लिए बलुई और दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। भूमि की ऊपरी सतह भी ढीली होनी चाहिए जिससे पेग्गिंग (सुइयां और फलियां बनना) की प्रक्रिया हो सके। इसकी खेती 100 से.मी वर्षा वाले क्षेत्रों में हो सकती हैं। बीकानेर जिले में मूंगफली के अंतर्गत 2.2 लाख हेक्टेयर क्षेत्र है तथा 6 लाख मेट्रिक टन उत्पादन प्रति वर्ष होता है। किन्तु इसके अच्छे उत्पादन के बावजूद भी मूंगफली के किसानों को बहुत अधिक लाभ नहीं मिल पाता है।

मूंगफली का पोषण मूल्य

मूंगफली को सामान्यतः गरीब के बादाम की संज्ञा दी जाती है। इसके दानों का अपना एक विशिष्ट मीठा और कुरकुरा स्वाद और महक होती है। मूंगफली के दानों में 48–50% वसा, 22–28% प्रोटीन तथा 26% तेल पाया जाता है। मूंगफली के दाने मानव पोषण की दृष्टि से अत्यंत लाभकारी हैं। यह ऊर्जा और प्रोटीन दोनों का उत्तम स्त्रोत है जिससे बढ़ते बच्चों में कुपोषण को दूर करने में सहायता मिलती है। मूंगफली में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और वसा की संतुलित मात्रा मिलती है जो बच्चों के विकास के लिए आवश्यक है। मूंगफली के तेल में मोनोअनसेचुरेटेड फैटी एसिड (MUFA) की अधिक मात्रा पायी जाती है जिससे हृदय रोगों से भी बचाव होता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अन्य मेवों की तुलना में मूंगफली कम कीमत में ऊर्जा, वसा और प्रोटीन के साथ साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों का भी अच्छा स्त्रोत है।

इसमें मूल्य संवर्धन की अपार संभावनाएं हैं। अतः उचित भण्डारण और मूल्य संवर्धन से किसानों को अधिक लाभ सुनिश्चित किया जा सकता है।

मूंगफली से बनने वाले मूल्य संवर्धित उत्पाद

- **नमकीन मूंगफली (साल्टेड पीनट्स)**– यह एक बेहद प्रचलित और पौष्टिक स्नैक है। इसे बनाने के लिए मूंगफली के दानों को 10 मिनट के लिए नमक के पानी में भिगो दें , तथा फिर छलनी पर निकल लें। अब एक कढ़ाई में पर्याप्त मात्रा में नमक डालकर उसे गरम करें, और फिर जब नमक गरम हो जाये तो भिगोई हुई मूंगफली को उसमें डालकर करारी होने तक सकें।

- **नट क्रैकर (टेस्टी मसाला पीनट्स)**– यह एक चटपटा स्नैक है जिसे काफी दिनों तक रखा भी जा सकता है। इसके लिए सर्वप्रथम मूंगफली (200) पर नमक, लाल मिर्च पाउडर, चाट मसाला, और हल्दी पाउडर डाल लें और थोड़ा पानी (लगभग 10–20 मिली) डालकर अच्छे से मिलाएं

कृषि विज्ञान केंद्र, बीकानेर–2 (लूनकरनसर)
स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर

जिससे मसाला मूंगफली पर चिपक जाये। फिर बेसन (100), चावल का आटा (50) तथा मक्के का आटा (25) को एक साथ मिलाएं, और इसमें भी नमक, मिर्च, हींग, हल्दी और चाट मसाला मिलाएं। अब इस मिश्रण को भीगी हुई मूंगफली के ऊपर छिड़कें और धीरे धीरे मिलाते जाएं। बीच बीच में थोड़ा पानी भी मिला सकते हैं , इस तरह मूंगफली पर बेसन की एक परत बन जाएगी। अब इसे 10 मिनट के लिए छोड़ दें। फिर इसपर थोड़ा सूखा बेसन छिड़कें जिससे एक एक दाना मूंगफली का अलग हो जाये। इसके बाद कढ़ाई में तेल गरम करके इसे तल लें और टिश्यू पेपर पर निकाल लें जिससे अतिरिक्त तेल निकल जाये। इस पर चाट मसाला छिड़क कर एक हवा बंद डिब्बे में रखें।

- **पौष्टिक लड्डू**– एक कढ़ाई में मूंगफली (आधा किलो) को भूनें जब तक हलके भूरे निशान बनने लगें, फिर इसे हल्का ठंडा होने पर छिलका अलग कर लें और दरदरा पीस लें। अब आधा किलो गुड़ को मिक्सर में पीस लें, फिर एक कढ़ाई में घी डालें और उसमें पीसा हुआ गुड़ मिलाएं, जब गुड़ अच्छे से गाल जाये, तो गैस बंद कर दें। गुड़ में मूंगफली मिलाएं, और थोड़ा ठंडा होने पर हाथों में घी लगाकर छोटे छोटे लड्डू बना लें। सर्दियों के मौसम में ये लड्डू बहुत स्वादिष्ट और पौष्टिक होते हैं, तथा एनीमिया के मरीजों के लिए भी आयरन का उत्तम स्त्रोत हैं।
- **चिक्की**– चिक्की बनाने के लिए मूंगफली और गुड़ की बराबर कि मात्रा लगती है। एक कढ़ाई में मूंगफली (आधा किलो) को भूनें जब तक हलके भूरे निशान बनने लगें, फिर इसे हल्का ठंडा होने पर छिलका अलग कर लें और मूंगफली को हल्का सा तोड़ लें। एक बर्तन में गुड़ डालकर गरम करें और साथ ही एक चौथाई कप पानी भी डालें। गुड़ पिघलने लगेगा, और जब चाशनी गाढ़ी होने लगे तो थोड़ा सा मिश्रण एक कप पानी में डालकर देखें, अगर वो ठोस बन जाता है तो चाशनी तैयार है। अब इसमें दो चम्मच घी मिलाएं और गैस बंद कर लें , फिर इसमें मूंगफली मिलाएं और थोड़ी देर चलाएं। एक प्लेट या तश्तरी पर घी लगाकर चिकना करें और इस मिश्रण को उसपर डालें। थोड़ा ठंडा होने पर बेलन से इसे पतला बेल लें। चाकू से काट लें और हवाबंद डिब्बे में रख लें।

- **मूंगफली का दूध**– मूंगफली के दानों को बेकिंग सोडा के एक प्रतिशत घोल में 16–18 घंटे भिगो कर रखें। फिर दानों को छानकर साफ पानी से धो लें। अब इन दानों को लगभग चार गुना पानी के साथ पीस लें और फिर मलमल के कपडे से छान लें। थोड़ा पानी और डालकर इस प्रक्रिया को दोहरा सकते हैं। अब जो पेय पदार्थ प्राप्त हुआ है उसे गैस पर रहकर उबालें , और फिर उसमें चीनी, इलाइची पाउडर, लॉन्ग पाउडर, दालचीनी पाउडर, या वैनिला फ्लेवर डालकर पिएं।
- **मूंगफली दही**– उपरोक्त विधि से प्राप्त दूध (एक लीटर) को हल्का गुनगुना होने तक गरम करें , और फिर उसमें 10–20 ग्राम दही मिलकर 4–6 घंटे के लिए 37 डिग्री सेल्सियस पर रखें। दही के जमने के बाद उसे फ्रिज में रखें।

मूंगफली से बनने वाले इन सभी मूल्य संवर्धित उत्पादों की जानकारी से किसान अधिक आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही महिला स्वयं सहायता समूह भी इन उत्पादों को तैयार कर स्थानीय स्तर पर बिक्री कर सकती हैं और आत्म–निर्भरता भी प्राप्त कर सकती हैं।

पश्चिमी राजस्थान में खार (हेलोक्सीन रिकवेम) एवं लाणा (हेलोक्सिलोन सैलिकोर्निकम) : एक वरदान

सोमदत्त[1], डॉ. आर. एस. राठौड़[2], दीपेन्द्र सिंह शेखावत[3], पी. सिंह[4], डॉ. पी एस. शेखावत[5]

पौधे पृथ्वी पर जीवन के प्रमुख हिस्सेदार हैं और मनुष्य द्वारा अन्य जीवन रूपों को कई तरीकों से विभिन्न सेवाएँ प्रदान करते हैं। पौधे मनुष्य को भोजन, इंधन, रेशे एवं आवास प्रदान करने के साथ–साथ विभिन्न बीमारियों के उपचार के लिए प्राचीन काल से स्वास्थ्य सेवा में भी उपयोग में लिये जा रहे हैं। क्यूंकि पौधों से निकाली गयी दवाओं का मानव स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव न्यूनतम, उपयोग में आसानी, क्रिया में प्राकर्तिक, और अन्य विभिन्न कारणों के कारण वर्तमान में दवा के रूप में पौधों पर मनुष्य की निर्भरता कई गुना बढ़ गई है। नई दवाओं के विकास के लिए पादप उत्पत्ति के प्राकृतिक उत्पादों ने एक वैकल्पिक स्रोत प्रदान किया है। खार (हेलोक्सिलोन रिकर्वम) एवं लाणा (हेलोक्सिलोन सैलिकोर्निकम) झाड़ीनुमा चिनोपोडियेसी कुल की बारहमासी प्रजातियां हैं। इनमें मलाईदार–सफेद या हल्के गुलाबी रंग के फूल सितंबर–अक्टूबर महीनों के दौरान दिखाई देते हैं। इसके पौधों पश्चिमी राजस्थान के श्री गंगानगर, बीकानेर, जैसलमेर व बाड़मेर जिले की शुष्क, गर्म, रेतीली और लवणीय मिट्टी जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों में फलते–फूलते हैं।थार क्षेत्र की बंजर भूमि में हेलोक्सिलोन की प्रजातियां महत्वपूर्ण जैवभार उत्पादक हैं।इस क्षेत्र के निवासियों के लिए हेलोक्सिलोन पौधों का अच्छा आर्थिक और पर्यावरण मूल्य है। हालांकि इसके पौधे जंगली क्षेत्र में पाए जाते हैं, इसकी खेती तथा प्रवर्धन प्राकृतिक तरीकों से मुश्किल है। यह पत्ती रिक्तिका में उच्च मात्रा में सोडियम और क्लोराइड आयनों को संग्रहित करता है।

हैलोक्सिलोन रिकर्वम (खार)

खार (हेलोक्सिलोन रिकर्वम) कच्चे सोडियम कार्बोनेट–बैरिला या साज्जी–खार का अच्छा स्रोत है। इस पौधे का उपयोग ईंधन के रूप में भी किया जाता है। इसकी राख का उपयोग साबुन के विकल्प के रूप में किया जाता है, कपड़े साफ करने के लिए और पानी के साथ आंतरिक अल्सर के उपचार हेतु भी किया जाता है। इसके पौधों की टहनियों का उपयोग नमक के गड्ढे में नमक जमाव (क्षार प्रदान करने वाला) के लिए किया जाता है। रेगिस्तान में अकाल के दौरान इस पादप की हरी–भरी कोमल शाखाओं का उपयोग ऊंट के चारे के रूप में किया जाता है। इस पौधे की राख का अर्क पश्चिमी राजस्थान के प्रसिद्ध बीकानेरी पापड़ के अनोखे स्वाद के लिए एक विशेष घटक के रूप में उपयोग किया जाता है।

लाणा (हेलोक्सिलोन सैलिकोर्निकम) ईंधन, चारा एवं यहां तक कि अकाल के दौरान भोजन एक अच्छा स्रोत है। इस पौधे की लकड़ी कम धुएँ और राख के साथ जलती है परिपक्व शाखाओं या लकड़ी का उपयोग तत्काल ईंधन के रूप में भी किया जाता है। इस पौधे की राख का उपयोग नमक के साथ मिश्रित कर एक दांत पाउडर के रूप में किया जाता है एवं छोटी हरी टहनियाँ ऊँट के चारे का एक अच्छा स्रोत हैं। लाणा के पौधों का उपयोग रेतीले क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता में वृद्धि और वातन लिए हरी खाद के रूप में भी किया जाता है। लाणा (हेलोक्सिलोन सैलिकोर्निकम) के बीजों और बाजरा के मिश्रित आटा विशेष चपाती (स्थानीय रूप से ढोकला के रूप में जाना जाता है) बनाने के लिए उपयोग किया जाता है। स्थानांतरित बालू टीलों के क्षेत्र में

1वरिष्ठ अनुसन्धान अध्येता, 2सह–आचार्य, उद्यान विज्ञान, 5निदेशक अनुसन्धान, अनुसन्धान निदेशालय, स्वा.के.रा.कृ.वि.वि., बीकानेर ,3पीएचडी शोधकर्ता, पौध व्याधि विभाग, श्री.क.न.कृ.वि.वि., जोबनेर, जयपुर 4सहायक आचार्य,सस्य विज्ञान , कृषि महाविद्यालय, स्वा.के.रा.कृ.वि.वि., बीकानेर

यह पौधा एक अच्छा मिट्टी बांधने वाला और स्थायीकारक हैं इसलिए इन प्रजातियों का उपयोग मिट्टी संरक्षण के लिए रेतीली मिट्टी को बांधने और स्थानीय समुदायों की गरीबी दूर करने के रूप में किया जा सकता है। इसके तने का उपयोग पारंपरिक बुनाई में ऊन की रंगाई के लिए किया जाता है।

हेलोक्सिलोन सैलिकोर्निकम (लाणा)

हेलोक्सिलोन सैलिकोर्निकम (लाणा) के फल

खार एवं लाणा से लवणीय भूमि का जैव निदान

खार एवं लाणा नमक से प्रभावित मिट्टी के जैव निदान या पादप उपचार करने के लिये रासायनिक उपचार विधि की तुलना में, यह अधिक कुशल पाया गया है। कठोर शुष्क व लवणीय परिस्थितियों में अच्छी तरह से बढ़ने और कम नमी और उच्च तापमान परिस्थितियों में जीवित रहने की क्षमता इसे शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में लवणीय भूमि के जैव निदान एवं उपचार के लिए इसे उपयुक्त बनाती है। पादप/जैव निदान के लिये उगाए गए पौधों के लाभकारी प्रभावों में मिट्टी में सूक्ष्म रंध्रों का निर्माण, समरूपता और अधिक गहराई तक सुधार, कम प्रारंभिक पूंजी निवेश, मृदा संग्रहण विकास और अधिक आर्थिक लाभ शामिल हैं। खार (हेलोक्सिलोन रिकर्वम) लवणों की बड़ी मात्रा को उद्ग्रहण एवं जमा करता है क्योंकि यह एक अत्यंत लवण सहिष्णु रसीले तने वाला पौधा है। उत्तर पश्चिमी राजस्थान से मिट्टी के नमूनों की रासायनिक जांच से पता चलता है कि खार (हेलोक्सिलोन रिकर्वम) मृदा में कार्बनिक कार्बन को बढ़ाता है एवं पीएच और विद्युत चालकता को कम करता है।

सज्जी–खार

सज्जी–खार सफेद भूरे रंग की मिट्टी के समान खारी वस्तु है। यह दो प्रकार की होती है:– एक वृक्षों से बनती है, भारत देश में खार (हेलोक्सिलोन रिकर्वम), लाणा (हेलोक्सिलोन सैलिकोर्निकम) से सज्जी–खार बनता है। इनके सुखाये हुये क्षुप को एक गड्ढे में भरकर उसमें आग लगा देते है। इसकी राख़ को ही खारी कहते है। इसी खारी से सज्जी–खार बनाई जाती है, जिसका पश्चिम राजस्थान में बीकानेरी पापड़ बनाने में काम में लिया जाता है। दूसरी सज्जी मिट्टी से बनती है। ऐसी भूमि में जहां खारापन विशेष होता है एवं भूमि फूल जाती है उस मिट्टी को एकट्ठा करके उससे सज्जीखार बनाई जाती है। सुवर्चिका (शोरा) में भी आयुर्वेदज्ञाता विद्वानों ने सज्जी के समान ही गुण बतलाये है। शोरा भी सज्जीखार के समान मृतिका से ही बनाया जाता है। इसे बड़ी–बड़ी भट्टियों में अधिक स्वच्छ किया जाता है। यह सफेद रंग का होता है जबकि सज्जीखार मैले रंग की होती है।

सज्जीखार के उपयोग

सज्जीखार को पापड़ खार भी कहते हैं। यह भूरे सफेद रंग का सख्त पत्थर है जिसे सज्जीखार कहते हैं। सेम, दाल आदि को जल्द पकाने हेतु यह खार उसमें डाला जाता है। बड़े, पकौड़े आदि नमकीन को

सज्जी खार बनाने के लिये जलाया हुआ खार लाना

सज्जी खार

नर्म बनाने के लिए भी इसका उपयोग होता है। इस प्रकार सज्जी खार को रसोईघर में मसाले का स्थान मिला हुआ है। इसके अतिरिक्त बच्चों के रोगों में भी यह औषधि के समान है। यह खार भारी, तीखा, स्निग्ध और ठण्डा तथा वायुनाशक है।

पश्चिमी राजस्थान में सज्जीखार बनाने की विधि :

सर्वप्रथम खार व लाना की टहनियों को भूमि की सतह से थोड़ा ऊपर से काटा जाता है जो कि मुख्यतः लवणीय भूमि में पाया जाता है। उक्त प्रक्रिया के पश्चात इसे सूखने के लिये छोड़ दिया जाता है। सूखने के पश्चात इसे जलाने की भट्ठी के पास इक्कठा कर लिया जाता है। यह भट्ठी मिट्टी की बनी होती है जिसमें नीचे एक ईटों से बना हुआ आयताकार कक्ष होता है जिसमें जलाने के पश्चात क्षार जमा होता है। जब ये कटी हुई टहनियां आग में जलने लायक हो जाती है तब इन्हें भट्ठी में जलाया जाता है।

खार लाना के सूखते हुए ढेर

आयताकार कक्ष युक्त भट्ठी

बीकानेर के जिले लूणकरणसर क्षेत्र में सज्जीखार बनाने क लिये भट्ठी में जलता हुआ खार व लाणा

सूखे हुए खार व लाणा की टहनियों को चित्र में दर्शायी गयी भट्ठी में जलाया जाता है। साथ ही लकड़ी के लम्बे लट्ठों से हिलाया जाता है। इस दौरान इनकी टहनियों से पादप अर्क निकलता है जो गुरुत्वाकर्षण के कारण बह कर भट्ठी के निचे बनाये गये आयताकार कक्ष में जमा हो जाता है जो कि अत्यधिक गर्म एवं लावा जैसा होता है। इस प्रकार जमा हुए अर्क को ठंडा होने के लिये छोड़ दिया जाता है। लगभग एक सप्ताह पश्चात भट्ठी के ठंडा हो जाने के बाद यह एक मटमैले ठोस पत्थर के रूप में बदल जाता है। इसे इकठ्ठा कर लिया जाता है एवं सज्जी खार के रूप में काम में लिया जाता है।

महिलाओं एवं बालिकाओ में खून की कमी को करें दूर : एनीमिया रोग की करें पहचान

डॉ. सीमा त्यागी[1] एवं दिव्या रघुवंशी[2]

एनीमिया रोग क्या है?

एनीमिया शरीर में एक विकार है। व्यक्ति के शरीर में खून की कमी या हीमोग्लोबिन की कमी के वजह से होता है। जिससे शरीर में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है और व्यक्ति कमजोर होने लगता है। हमारे शरीर में हिमोग्लोबिन एक ऐसा तत्व है जो शरीर में खून की मात्रा बताता है। पुरुषों में इसकी मात्रा 12 से 16 प्रतिशत तथा महिलाओं में 11 से 14 के बीच होना चाहिए।

- एनीमिया तब होता है, जब शरीर के रक्त में लाल कणों या कोशिकाओं के नष्ट होने की दर, उनके निर्माण की दर से अधिक होती है।
- किशोरावस्था और रजोनिवृत्ति के बीच की आयु में एनीमिया सबसे अधिक होता है।
- भारत में 80 प्रतिशत से अधिक गर्भवती महिलाएं एनीमिया से पीड़ित हैं।
- गर्भवती महिलाओं को बढ़ते शिशु के लिए भी रक्त निर्माण करना पड़ता है। इसलिए गर्भवती महिलाओं को एनीमिया होने की संभावना होती है।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NHFS) के पहले चरण में, 22 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के लिए परिणाम तथ्य पत्रक जारी किए गए हैं। सर्वे के दौरान 6 से 59 महीने के बच्चों और 15 से 49 साल की उम्र के महिलाओं और पुरुषों में एनीमिया की जांच की गई। इनमें से अधिकांश राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में आधे से अधिक बच्चे और महिलाएं एनीमिया से ग्रसित पाए गए।

ग्लोबलडाटा के अनुसार, 16 प्रमुख फार्मा बाजारों में भारत में एनीमिया का प्रसार सबसे अधिक है। प्रमुख डेटा और एनालिटिक्स कंपनी ग्लोबलडाटा के अनुसार, भारत में 16 प्रमुख फार्मास्युटिकल बाजारों में एनीमिया का सबसे अधिक प्रसार 39.86 प्रतिशत है, जो मुख्य रूप से खराब खाने की आदतों और उचित स्वास्थ्य देखभाल की कमी के कारण है।

16 प्रमुख फार्मा बाजारों में एनीमिया का कुल प्रसार

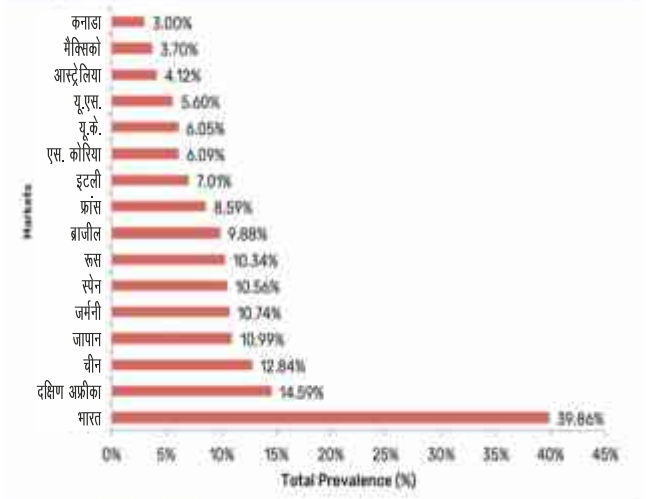

स्रोतः ग्लोबलडेटा का महामारी विज्ञान डेटा (2018)

एनीमिया के लक्षण

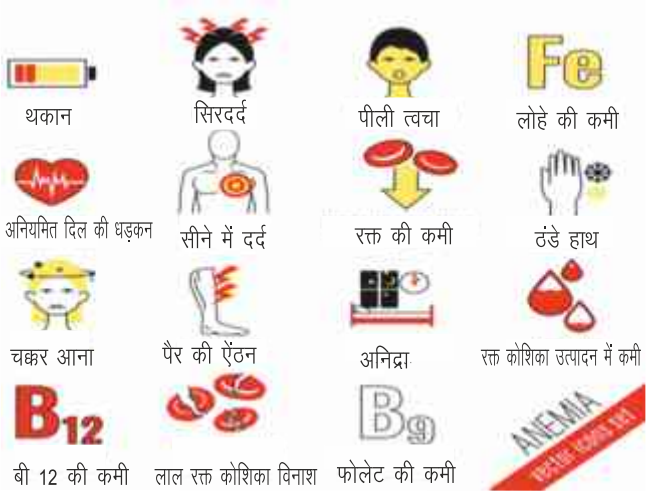

कारण

- सबसे प्रमुख कारण लौह तत्व वाली चीजों का उचित मात्रा में सेवन न करना।
- मलेरिया के बाद जिससे लाल रक्त करण नष्ट हो जाते हैं।
- किसी भी कारण रक्त में कमी, जैसे–शरीर से खून

1 एटिक प्रभारी 2. गेस्ट लेक्चर्र, गृह विज्ञान महाविद्यालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

निकलना (दुर्घटना, चोट, घाव आदि में अधिक खून बहना)
- शौच, उल्टी, खांसी के साथ खून का बहना।
- माहवारी में अधिक मात्रा में खून जाना।
- पेट के कीड़ों व परजीवियों के कारण खूनी दस्त लगना।
- पेट के अल्सर से खून जाना।
- बार–बार गर्भ धारण करना।
- हरी सब्जियां न खाना।
- फोलिक एसिड की कमी से एनीमिया की बीमारी होती है। शरीर में स्वस्थ लाल रक्त कण बनाने के लिए फोलिक एसिड की आवश्यकता होती है।

उपचार

घरेलु उपचार

आम तौर पर असंतुलित भोजन के असर के कारण भी एनीमिया होता है। एनीमिया के कुछ प्रकारों से बचा नहीं जा सकता क्योंकि वह अनुवांशिक होते हैं। लेकिन मूल रूप से खान–पान में थोड़ा बदलाव लाने की जरूरत होती है। एनीमिया से बचाव के लिए ऐसे आहार का सेवन करना चाहिए जिससे शरीर में खून की मात्रा बढ़े जैसे चुकंदर, गाजर, पालक, बथुआ और अन्य हरी सब्जियां। काले चने और गुड़ में भी आयरन भरपूर मात्रा में होता है।

- सब्जी बनाने के लिए लोहे की कड़ाही का इस्तेमाल करें।
- एनीमिया के रोगी को भरपूर मात्रा में दूध का सेवन करना चाहिए।
- केला, सेब आदि ताजे फलों का सेवन करना चाहिए।
- सब्जियों में हरी पत्तेदार सब्जियां, चुकंदर, शकरकंद और अनाज को खाने में शामिल करें।
- विटामिन–सी आयरन को शरीर से कम नहीं होने देता। इसके लिए आंवला, संतरा, मौसमी जैसी चीजों को सेवन करना चाहिए।
- विटामिन 'ए' युक्त खाद्य पदार्थ खाएं। विटामिन 'ए' संक्रमण से शरीर की रक्षा करता है। गहरे पीले फल एवं हरे रंग की पत्तेदार सब्जियां विटामिन 'ए' के स्रोत हैं।
- भोजन के बाद चाय के सेवन से बचें, क्योंकि चाय भोजन से मिलने वाले जरूरी पोषक तत्वों को नष्ट करती है।
- संक्रमण से बचने के लिए स्वच्छ पेयजल ही इस्तेमाल करें। स्वच्छ शौचालय का प्रयोग करें।
- यदि आपके क्षेत्र में हुकवर्म काफी मात्रा में है तो नंगे पैर खेतों/ जमीन पर न चलें।

चिकित्सा

- अगर एनीमिया मलेरिया या परजीवी कीड़ों के कारण है, तो पहले उनका इलाज करें।
- डॉक्टर से परामर्श – अगर आयरन की कमी अधिक हो गई है तो डॉक्टर से सलाह लेकर आयरन, फोलिक एसिड की टेबलेट लेना शुरु करें।
- गर्भवती महिलाओं एवं किशोरी लड़कियों को नियमित रूप से 100 दिन तक लौह तत्व व फॉलिक एसिड की 1 गोली रोज रात को खाने के बाद लेनी चाहिए।
- आंगनवाड़ी केंद्र में जाके वहां के स्वास्थ्य कर्मियों से सलाह लेकर नियमित रूप से दवा का सेवन करें।

अखबार में प्रकाशित विश्वविद्यालय समाचार

ने वर्चुअल किया कृषि महाविद्यालय के कक्षा कक्षों का लोकार्पण

परम्परागत ऊर्जा पर हमारी निर्भरता तो कम होगी, पर्यावरण संरक्षण को भी बढ़ावा मिलेगा और सालाना 2.65 लाख यूनिट बचत कर आत्मनिर्भर बनेंगे- कुलपति प्रो.आर.पी. सिं

किसानों को सफल पौधरोपण की सलाह के साथ सीजन में अब तक 44 हजार पौधे बेचे व मांग को देखते हुए 50 हजार और पौधे तैयार का लक्ष्य : कुलपति प्रो. सिंह

शुष्क क्षेत्रों में किया कृषि की उन्नत तकनीकों का विकास

कृषि शिक्षा में आगे बढ़ रहा राजस्थान-कटारिया

सितम्बर माह के कृषि कार्य

डॉ. पी.एस. शेखावत, निदेशक अनुसंधान,
स्वा. के.रा.कृ.वि. बीकानेर

सस्य विज्ञान

बाजरा :– आगामी माह में अधिकांश खरपतवारों के बीज जो बने हैं। बीज पक कर झड़ने से पूर्व उखाड़ कर खेत से बाहर निकालकर नष्ट करें। आगिया या रुखड़ी (स्ट्राइगा नामक खरपतवार) के प्रकोप वाले खेत चिन्हित करें। जिससे अगले साल उपयुक्त फसल चक्र अपनाया जा सके। ऐसे खेतों से उत्पादित फसल के बीज आगामी साल में काम में नहीं लिया जाना चहिये। सिंचित बाजरे की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। बाजरे की फसल में सिट्टा निकलते समय एवं दाना भरते समय भूमि में पानी की कमी से उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अतः सिंचाई सुविधा उपलब्ध हो तो सिंचाई अवश्य करें। बाजरे की देर से बोई गई फसल में जहाँ नत्रजन की शेष आधी मात्रा का प्रयोग नहीं किया गया हो तो उपयुक्त अवस्था को देखते हुए 30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर के हिसाब से नत्रजन दिया जा सकता है।

कपास :– कपास फसल में पुष्पकलिका निकलने की अवस्था का विशेष महत्व है। ऐसी कलिकांए ही मात्र फल शाखाओं में विकसित होती है। पार्श्व शाख से नहीं। इस अवस्था में पानी की कमी होने पर नव विकसित फूल एवं फल नहीं पनपते और अक्सर डोड़ें झड़ने लगते है अर्थात आवश्यक हो तो सिंचाई अवश्य करें। कपास के खेत को खरपतवार रहित रखना चाहिये जहाँ तक हो फसल में अन्य किस्म के पौधे भी नहीं होनें चाहिये। यदि ऐसा है तो गुणवत्ता पर बुरा प्रभाव पड़ता है और बाजार में भाव कम मिलता है। कलिका बनने की अवस्था तक नत्रजन की शेष आधी मात्रा का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहियें।

मूंगफली, ग्वार, मोठ एवं तिल :– सिंचाई सुविधा वाली फसलों में आवश्यकतानुसार सिंचाई अवश्य करें। इस समय अधिंकाश फसले फल विकास अवस्था में होती है, उपज वृद्धि के लिये सिंचाई आवश्यक है। मूंगफली में सुइंया बनने की तथा फलियां विकसित होने की अवस्था सिंचाई के लिये अत्यन्त संवेदनशील अवस्था है अतः सिंचाई अवश्य करें। फसलों से खरपतवार बीज बनने से पूर्व नष्ट करें।

तोरिया :– **किस्में** :– संगम, टी–9 एवम् टी.एल–15 **बुवाई का समय** :– तोरिया की बीजाई का उपयुक्त समय सितम्बर माह का पहला पखवाडा है। जिन खेतों में तौरिया के पश्चात गेहूँ की बुवाई करनी है वहां टी.एल. 15 किस्म को सितम्बर के प्रथम सप्ताह में बोयें। **बीज की मात्रा एवं बुवाई विधि** :– 750 ग्राम, प्रमाणित बीज प्रति बीघा पर्याप्त रहता है। इसकी 30 सेमी. की दूरी में कतारों में बुवाई करनी चाहिये। बुवाई के तीन सप्ताह पश्चात पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी. रखते हुये विरलीकरण कर दें। **खाद एवं उर्वरकः**– सिचिंत फसल के लिए अन्तिम जुताई के समय 10 किलो नत्रजन एवम् पांच किलो फास्फोरस प्रति बीघा की आवश्यकता होती है। असिचिंत क्षेत्र में 5 किलो नत्रजन व 2. 5 किलो फास्फेट बुवाई के समय दें।

कीट विज्ञान :– **नरमा व देसी कपास** :– (अ) समय : सितम्बर के दूसरे सप्ताह में। चित्तीदार, गुलाबी व अमेरिकन लट। नियंत्रण हेतु फेनवलरेट 20 ई.सी. या डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी. 1.0 मि.ली./लीटर या क्यूनालफास 25 ई.सी. 20 मि. ली. या इन्डोक्साकर्ब 14.5 एस.सी. के साथ छिड़काव करें। तीसरे व चौथे छिड़काव में सिंथेटिक पाइरेथ्रोइड का लगातार प्रयोग न करें। (ब) हरा तेला सफेद मक्खी या अन्य रस चूसने वाले कीट का प्रकोप हो तो एसीफेट 2.0 ग्राम या नीमयुक्त रसायन + तरल साबुन 5 मिली + 1 मिली या ट्राइजोफोस 2.5 मिली प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें। बी.टी. कॉटन के रस चूसने वाले कीटों का नियंत्रण हेतु –1. इमिडाक्लोप्रिड 200 मिली 0.3 मिली/लीटर पानी 2. थायामिथोक्जाम 25 डब्ल्यूजी 0.5 मिली/लीटर पानी 3. एसीटामाइप्रिड 20 एसजी 0.4 मिली/लीटर पानी 4. थायोक्लोराइड 240 एसजी 1.0 मिली/लीटर पानी 5. डाइफैन्थूरान 50 डब्ल्यूजी 2.0 मिली/लीटर पानी

मूंगफली व अन्य खरीफ की अधिकांश फसलों में सफेद लट का प्रकोप :– खड़ी फसल में सफेद लट या दीमक का प्रकोप हो तो 800 से 1000 मि.ली. क्लोरोपाइरीफास 20 ई.सी. या क्यूनालफोस 25 ई.सी. या 75 मिली इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. प्रति बीघा की दर से सिंचाई के साथ देवे। **ग्वार की फसल** :– तेले का प्रकोप हो तो डाइमेथोएट का 250 मि.ली. प्रति बीघा की दर से छिड़काव करें। इनके अतिरिक्त इमिडाक्लोप्रिड (3मिली/10 लीटर पानी) या एसीटामाप्रिड (2ग्राम/10 लीटर पानी) या कार्बोसल्फान (1.0 मिली/10 लीटर पानी) घोलकर छिड़काव करें।

गन्ना:–तन्ना छेदक की रोकथाम के लिए फोरेट 10 जी कण 4 किलो प्रति बीघा की दर से डालें। पायरिला कीट के प्रकोप से बचने के लिए डाईमथोएट 30 ई.सी. एक लीटर प्रति

हैक्टर की दर से डालें। सफेद मक्खी के नियन्त्रण हेतु इथियान 50 ईसी 250 मिली प्रति बीघा का छिड़काव करें। सितम्बर माह में गन्ने की फसल में पाइरीला का प्रकोप बढ सकता है। अतः ऐपिरिकेनिया परजीवी को खेत में पनपने के लिए 1500 कोकून प्रति बीघा की दर से पौधों की ऊपरी पत्तियों के मध्य में सोख दें।

धान :—धान की फसल में तना छेदक व पत्ती लपेटने वाली लट का प्रकोप हो व 5 प्रतिशत डैड हर्ट पौधों में दिखाई दे तो ट्राइजोफास 40 ईसी 250 मिली प्रति बीघा का छिड़काव करें। कार्बोफयूरान 3 जी 6 किग्रा या फोरेट 10 प्रतिशत 4 किग्रा प्रति बीघा भूमि में मिला दें।

पौध व्याधि :— बाजरा :— (1) तुलासिता रोग :— यह रोग स्कलेरोस्पोरा ग्रेमिनिकोला नामक कवक द्वारा फैलता है। जो पौधे की छोटी अवस्था पर ही देखा जा सकता है। पत्तियां आंशिक या पूर्णतः पीली या सफेद हो जाती है। देर से निकलने वाली पत्तियां पहले वाली पत्तियों की अपेक्षा अधिक पीली होती है। पत्तियों पर पीली धारियां बनती हैं। फलस्वरुप पत्तियां सिरे से फटने लगती हैं नम वातावरण में पत्ती के नीचले भाग पर आसित के सफेद तन्तु देखे जा सकते हैं। प्रथम संक्रमण भूमि में पड़े गत वर्ष के रोगग्रस्त पत्तों के कारण एवं द्वितीय संक्रमण वायु व कीटों द्वारा होता है। रोकथाम हेतु रोग के प्रथम लक्षण दिखने पर मैकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें। (2) अरगट रोग :— यह रोग बाली आने की अवस्था पर आता है। माह सितम्बर में इसका प्रकोप नहीं होता है।

मूंग व मोठ :— इस फसल की बुवाई लगभग हो चुकी है देरी से बोई जाने वाली फसल के बीजों को 2 ग्राम कार्बेडेजिम से उपचारित करके ही बुवाई करें। उन्नत किस्में आर.एम.ओ.—40, 225, 257 एव 435 की ही बुवाई करें। जो कि विषाणु रोधी किस्में है मूंग में के—851 एवं एस. एम. एल. —668, आर. एम. जी.—268 की ही बुवाई करें। प्रमुख रोग :— विषाणु जनित पीला मोजेक रोग जो कि जैमिनी वायरस द्वारा फैलता है। रोग का फैलाव सफेद मक्खी रोगी पौधे में विषाणु चूस कर स्वस्थ पौधों तक पहुँचाती है। **रोकथाम** :— रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही रोगोर या मेटासिस्टोक्स 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल के हिसाब से 15 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें। **चित्ती जीवाणु रोग** :— मूंग एवं मोठ में यह रोग जेन्थोमोनास नामक जीवाणु द्वारा फैलता है। इस रोग में छोटे गहरे भूरे रंग के धब्बे पत्तों पर तथा प्रकोप बढ़ने पर फलियों और तनों पर भी दिखाई देता है फलस्वरुप पौधा मुरझा जाता है। लक्षण दिखाई देते ही एग्रीमाइसीन 2 ग्राम/10 लीटर पानी में या कॉपर—ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अन्तर पर दो छिड़काव करें।

ग्वार :— देरी से बोये जाने वाले ग्वार को जड़ सड़न (मेक्रोफोमिना एवं एस्परजीलस) से बचाव हेतु बुवाई से पूर्व कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचारित करें।

अंगमारी एवं झूलसा रोग :— यह रोग माह अगस्त के अन्त में दिखाई पड़ जाता है जेन्थोमोनास जीवाणु जनित रोग की रोकथाम हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 100 पी.पी.एम. (यानि 10 लीटर पानी में एक ग्राम दवा) व कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.2% का छिड़काव लक्षण दिखाई पड़ने पर ही करें।

तिल :— अंगमारी एवं झूलसा रोग से बचाव हेतु दर्शाये गये रोकथाम का उपाय करे।

मूंगफली :— टिक्का रोग :— यह रोग सरकोस्पोरा एरेचीडीकोला एवं स.परसोनाटा नामक दो कवकों द्वारा फैलता है। रोग के लक्षण वातावरण में नमी आद्रता बढ़ने पर देखे जा सकते हैं दोनों कवकों के लक्षण भिन्न—भिन्न होते है।

स. एरेचीडीकोला :— अगेती पर्ण चित्ती, बड़े धब्बे, गोलाकार व अनियमित आकार, व्यास 4—10 एम.एम., ऊपरी सतह पर। **स. परसोनाटा** :— पछेती पर्ण चित्ती, धब्बे छोटे, गोलाकार, व्यास 1—8 एम.एम. गहरे भूरे रंग के ऊपरी एवं निचली दोनों सतह पर कवक संक्रमण प्रायः बाहरी त्वचा की कोशिकाओं के वेधन अथवा रन्ध्रों द्वारा प्रवेश से होता है। पछेती पर्ण चित्ती हानिकारक होती है। **रोकथाम** :— लक्षण दिखाई पड़ते ही मैकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर दो बार करें। जड़ सड़न एवं काला रोग का प्रकोप हो तो दानेदार कार्बेडिजम 3—4 किलो प्रति बीघा भूरकाव करें।

कपास एवं नरमा :— (1) ब्लेक आर्म (जीवाणु अंगमारी रोग — रोग जनक जेन्थोमोनास मालवेशियरम नामक जीवाणु। रोकथाम :— रोग के लक्षण दिखते ही 6 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन+300 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति बीघा के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें। छिड़काव 60 दिन, 80 दिन व 100 दिन पर दोहराना चाहिये। (2) लीफ कर्ल वीषाणु रोग :— लक्षण पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं। यह रोग जैमिनी वायरस द्वारा फैलता है। सफेद मक्खी नामक कीट रोग को फैलाने का कार्य करता है। लक्षण दिखाई पड़ते ही मेटासिस्टॉक्स 0.03 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर दो बार करें।

निदेशक की कलम से .....

सुभाष चन्द्र
निदेशक प्रसार शिक्षा

प्यारे किसान भाईयों तथा बहनों को अभिवादन!

कृषि क्षेत्र में आज तमाम आधुनिक तकनीकें विकसित की जा चुकी है। जिसमें फसलों की उन्नत किस्में, पौध संरक्षण के उपाय, खेती व कटाई उपरान्त भण्डारण के उन्नत तरीके तथा प्रसंस्करण इत्यादि प्रमुख है। कृषि में हुए विकास से कृषकों के उत्पादन व आय दोनों में बढ़ोत्तरी हुई है। बेहतरीन कृषि तरीकों के विकास होने के बावजूद कृषि आज भी मौसम पर निर्भर करती है। वर्तमान में क्षेत्र में हुई अनियमित वर्षा का प्रभाव भी कृषि उत्पादन पर पड़ेगा। ऐसी स्थिति में किसान भाईयों को सामान्य खेती से हटकर कृषि में नवाचार को अपनाना चाहिए। समन्वित खेती प्रणाली कृषि का वह रुप है, जिसमें किसान खेती के एक से ज्यादा घटकों को एक साथ उपयोग कर कम भूमि और कम जल में भी अच्छी व निरन्तर आय प्राप्त कर सकता है। कृषि के साथ दुग्ध उत्पादन, बकरी पालन, मछली उत्पादन, अण्डा व मुर्गी उत्पादन, मशरुम उत्पादन, फल व सब्जी उत्पादन आदि से वर्ष भर आय प्राप्त की जा सकती है। विभिन्न घटकों के गौण–उत्पाद दूसरे घटकों के उत्पादन में प्रयोग कर कृषि की लागत को भी कम किया जा सकता है। साथ ही समन्वित खेती प्रणाली से खेती में जैविक व अजैविक कारकों के कारण से होने वाले जोखिम भी कम होती है। लगातार वर्ष भर आय के अलावा समन्वित खेती प्रणाली कृषक परिवार को वर्ष भर पोषक आहार की उपलब्धता भी सुनिश्चित करती है। क्षेत्र के कृषकों को अपनी कृषि भूमि पर समन्वित खेती प्रणाली के कुछ घटकों को अपनाकर खेती में विविधता लाने की आवश्यकता है। विश्वविद्यालय के प्रसार शिक्षा निदेशालय के विभिन्न कृषि विज्ञान केन्द्रों के सम्पर्क में रहकर कृषक भाई खेती में नवाचार को अपनाएं ।

शुभकामनाओं सहित!

आओ मिलकर करें ये काम

वृक्ष लगाएं

जल की हर एक बूंद बचाएं

कोरोना को फैलने से रोकें

टीकाकरण कराएं

मास्क पहनें

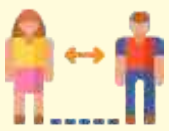

सामाजिक दूरी बना कर रखें

हाथों को साबुन से बार–बार धोएं

मार्गदर्शक : डॉ. सुभाष चन्द्र, निदेशक प्रसार शिक्षा, **सम्पादक** : डॉ. (श्रीमती) सीमा त्यागी, एटिक प्रभारी **सहयोग** : सतीश सोनी, सूचना एवं जनसम्पर्क अधिकारी, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर